
चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
50



अगले दिन सवेरे दुर्योधन ने सभा बुलाई। भीष्म से कहा-"महोदय! आपने पाण्डव सेना देखी है। आप उसे अकेले कितने समय में नाश कर सकेंगे? इसी तरह, मुझे यह जानने की उत्सुकता हो रही है, द्रोण, कृपा, अश्वत्थामा, कर्ण, अपने दिव्यास्त्रों की सहायता से पाण्डव सेना को कितने समय में जीत सकेंगे।"

तब भीष्म ने कहा-"राजा, यह उचित ही है कि तुम अपने पक्ष का बल जानो। मैं अपनी शक्ति के बारे में बताता हूँ। सुनो। मैं एक दिन में दस हजार योद्धाओं और हजार रथिकों को मार सकता हूँ। मेरे पास ऐसे दिव्यास्त्र हैं, जो लाखों आदमियों को एक साथ मार सकते हैं। उनका उपयोग करने से ही पाण्डव सेना का नाश करने के लिए मुझे एक महीना लगेगा।"

फिर दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से ही यही पूछा। द्रोण ने मुस्कराकर कहा-"राजा, मैं बूढ़ा हूँ। मेरी शक्ति कम हो गई है। मैं भी भीष्म की तरह पाण्डव सेना एक महीने में नष्ट कर सकूँगा। मैं इससे अधिक नहीं कर सकता।"

इसके बाद कृपा ने कहा कि वह दो महीनों में यह काम कर सकेगा। जबकि अश्वत्थामा ने बताया कि पाण्डव सेना का वह दस दिन में संहार कर देगा। कर्ण ने कहा कि इस काम के लिए पाँच दिन ही उसके लिए काफी थे।

यह सुन भीष्म हँसा। उसने कहा-"जब तक तेरा कृष्ण और अर्जुन से सामना नहीं होता, तू इसी तरह शेरवी बघारता

रहेगा। कहने में क्या जाता है। कहोगे कि इससे भी बड़े बड़े काम करोगे।"



इस सम्भाषण के समाचार दूतों द्वारा युधिष्ठिर के पास पहुँचे। उसने अपने भाइयों को बुलाकर उन्हें भीष्म, द्रोण, कृपा, अश्वत्थामा, कर्ण आदि की बातों के बारे में बताया। उसने अर्जुन से पूछा-"मैं जानना चाहता हूँ कि तुम कितने समय में कौरवों का निर्मूलन कर सकोगे? यह जानना आवश्यक है।"

अर्जुन ने एक बार कृष्ण की ओर देखकर कहा-"तुम प्रतिपक्षियों के बारे में चिन्ता न करो। हमारी सेना में महारथ और अतिरथ हैं। वे कौरव सेना का नाश कर देंगे। क्या मेरे पास पाशुपत अस्त्र नहीं हैं, जो महेश्वर ने विराट रूप में आकर मुझ से द्वन्द युद्ध करके मेरी शक्ति की प्रशंसा करके, मुझे दिया था? उसमें वह शक्ति है जो एक क्षण में तीनों लोकों का विनाश कर सकती है। यदि कृष्ण का साथ रहे, तो मैं इस महाशक्ति से तीन लोकों का नाश कर सकता हूँ। वैसा अस्त्र भीष्म आदि के पास नहीं है। परन्तु हमें ऐसे अस्त्रों का उपयोग नहीं करना चाहिये। हम न्यायपूर्वक युद्ध करके शत्रु को पराजित करेंगे। शिखण्ड़ी, युयुधान, धृष्टद्युम्न, भीम, नकुल, सहदेव, युधामन्यु, उतमौज, शंख, घटोत्कच, सात्यकी, अभिमन्यु, तुम, विराट, द्रुपद, उपपाण्डव क्या हम सब मिलकर तीनों लोकों को नहीं जीत सकते हैं?"

अगले दिन प्रातःकाल, पश्चिम से पाण्डवसेना, पूर्व से कौरव सेना युद्ध भूमि में आई। क्यों कि उस समय जम्बूद्वीप के सब योद्धा कुरुक्षेत्र में थे, इसलिए ऐसा लगता था जैसे सारा द्वीप योद्धाहीन हो गया हो।

दोनों पक्षों का उत्साह आसमान को छूता सा लगता था। आकाश में महायोद्धाओं की ध्वजायें फहरा रही थीं। उनकी शंख ध्वनियों से दसों दिशायें गूँज रही थीं। मूमि हिलती-सी लगती थी।

दोनों पक्षों ने कुछ युद्ध नियम निश्चित किये। युद्ध स्थल को छोड़कर भाग जानेवाले को न मारा जाय। रथ के सवार से रथ के सवार ही, हाथी पर सवार से हाथी पर सवार ही, अश्वारोही से अश्वारोही ही, पदाति से पदाति ही युद्ध करें। युद्ध न करनेवाले, बेहोश को न मारा जाय। युद्धविमुख और कवचहीन को न मारा जाय। रथिक की अनुपस्थिति में घोड़ों को, सारथी को, बाण देनेवाले को शंख बजानेवाले को न मारा जाय।

उस समय व्यास महामुनि ने धृतराष्ट्र के पास आकर कहा-"काल महिमा के अनुसार सब योद्धा मर मिटने के लिए कुरुक्षेत्र में एकत्रित हैं। तुम्हारा उनके बारे में शोक करना निरर्थक है। युद्धभूमि के समाचार, सञ्जय अब तब जाकर तुम्हें बताता रहेगा।"



सञ्जय अट्ठारह दिन, जब तक महाभारत युद्ध चलता रहा, युद्ध के समाचार धृतराष्ट्र को बताता रहा।

इधर युद्धभूमि में, कौरव सर्व सेनानी, भीष्म सफेद कवच और सफेद पगड़ी पहने हुए था। उसके रथ पर ताड़ के वृक्ष से अङ्कित पताका फहरा रही थी।

अपने पक्ष के बीरों को बुलाकर उसने उनको सम्बोधित करके कहा-"क्षत्रिय वीरो! तुम्हारे लिए स्वर्ग के द्वार खुले हुये हैं। उन द्वारों से तुम इन्द्रलोक और ब्रह्मलोक जा सकोगे। हमारे लिए वेदोक्त अनादि मार्ग यही है। इसलिए तुम भय छोड़ दो। मान्धाता, मायाति, नहुष, आदि द्वारा प्रशस्त मार्ग पर धैर्य के साथ चलो। रोगियों की तरह घर में मरना क्षत्रियों का लक्षण नहीं है।"

कौरव सेना एक व्यूह में व्यवस्थित की गई। उसमें भिन्न भिन्न योद्धा अपने अपने निश्चित स्थल पर खड़े थे। यह ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी।

उधर अर्जुन अपनी सात अक्षौहिणी सेना को वज्र नाम के व्यूह में खड़ा कर रहा था। यह दुर्जय व्यूह है।



इस ब्यूह के सामने भीम को खड़ा किया। नकुल और सहदेव, भीम के चक्ररक्षक बनाये गये। भीम के पृष्ठ भाग की रक्षा के लिए उपपाण्डव और अभिमन्यु आदि नियुक्त हुए। इन सब की रक्षा सर्वसेनानी धृष्टद्युम्न कर रहा था।

दोनों सेनायें आगे बढ़कर एक दूसरे के पास आमने-सामने आई। उस समय सूर्योदय हुआ।

महासमुद्र की तरह आती कौरव सेना, और उसके नायक भीष्म को देखकर युधिष्टिर घबरा गया। उसने अर्जुन को पास बुलाकर कहा- "देखा, शत्रु सेना ने किस तरह का दुर्भेद्य व्यूह बना रखा है। यही नहीं उन्हीं की तरफ भीष्म भी है। क्या हम इस सेना को कभी जीत सकेंगे? क्या हमारी विजय होगी?"

"राज्य जीतने के लिए बल और वीरता प्रधान नहीं है। धर्म प्रधान है। हमारी तरफ धर्म है। यही नहीं, कृष्ण भी हमारी तरफ है। विजय हमारी ही होगी।" अर्जुन ने युधिष्ठिर को ढाढ़स बन्धाया।

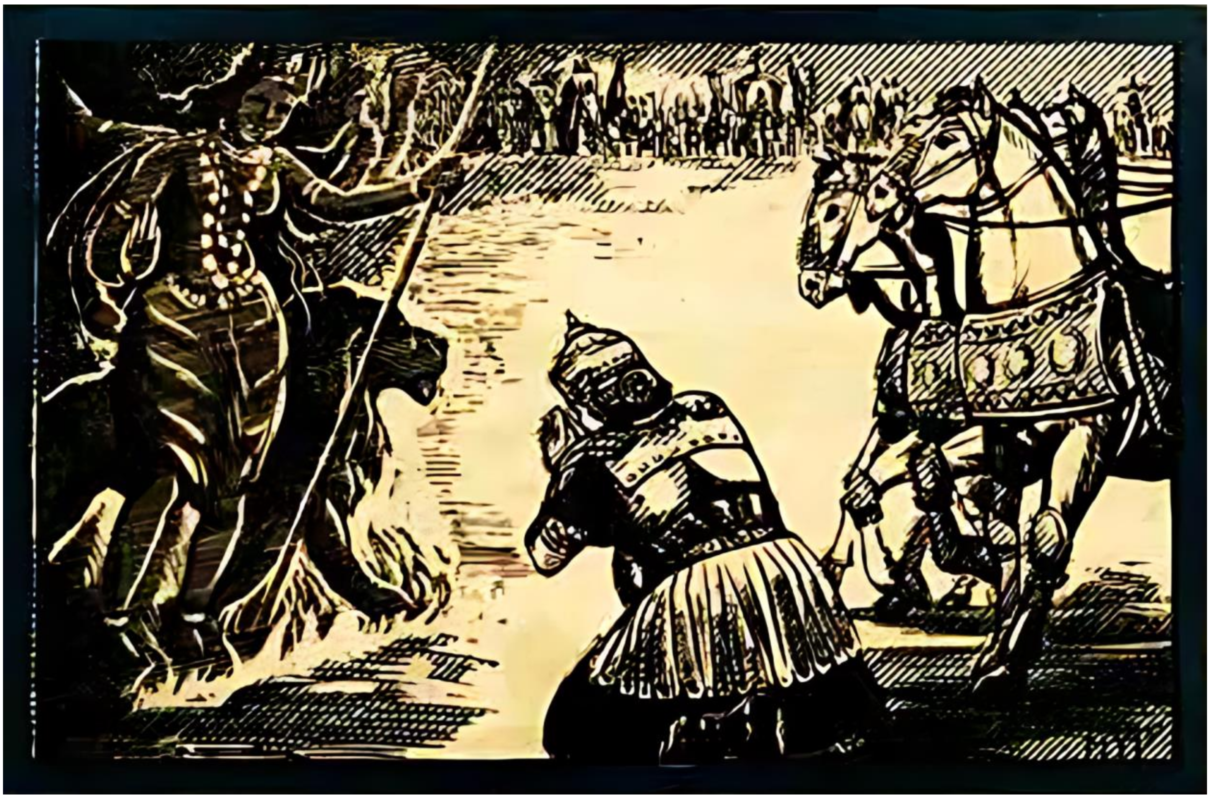
कृष्ण ने अर्जुन के साथ युद्ध भूमि में प्रवेश करने से पहले दुर्गा की उपासना



करने के लिए कहा। अर्जुन ने रथ से उतरकर, युद्ध भूमि की ओर मुड़कर, हाथ जोड़कर दुर्गा की आराधना की। फिर रथ पर चढ़कर उसने कहा-"कृष्ण, मुझे किन किन से युद्ध करना है, उनको एक बार दिखाओ। मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में ले जाकर खड़ा कर दो।" कृष्ण ने वैसा ही किया।

अर्जुन ने कौरव सेना देखी। जिधर देखो उधर उसको पिता, दादा, गुरु, मामा, भाई, पुत्र, पौत्र, मित्र, बन्धु-बान्धव ही दिखाई दिये। उसने काँपते हुए कहा-"कृष्ण! राज्य के लिए, भोग विलासों केलिए, क्या मुझे इन्हें मारना है? क्या इनको मारकर में स्वर्ग के आनन्द भोग सकूँगा? कौरव नीच हैं, इसलिए इन सबको मरवाने के लिए यहाँ लाये हैं। में इनको अपने हाथों मारने की अपेक्षा यह चाहूँगा कि मैं इनके हाथ मर जाऊँ। मैं युद्ध नहीं कर सकता। गाण्डीव न पकड़ पाऊँगा। युद्ध से क्या लाभ?" उसने कहा। उसकी आँखों से अश्रुधारा बह रही थी।

कृष्ण ने अर्जुन का अज्ञान हटाने के लिए कितने ही उपदेश दिये। "तू हत्यारा



नहीं है, न ये मरते ही हैं। मनुष्य का शरीर नश्वर है, वे क्षण भंगुर हैं आत्मा अनश्वर है। यह भ्रम छोड़ दो कि तुम हत्यारे हो। तुम अपने धर्म का पालन करो। तुम्हें कार्य करने का ही अधिकार है, फल की अपेक्षा करने का अधिकार नहीं है। तुम किसी प्रकार के सन्देह में न पड़ो।" कृष्ण ने आत्मा, कर्म, ज्ञान, योग, मोक्ष, आदि के बारे में अर्जुन को बताया। आखिर कृष्ण को अपना विश्वरूप भी अर्जुन को दिखाना पड़ा।

कृष्ण के हितोपदेश के कारण अर्जुन के भय, भ्रम और सन्देह चले गये। "कृष्ण! अब मेरा क्या कर्तव्य है, बताओ। जो तुम करने को कहोगे, वह मैं करूँगा।" अर्जुन ने कहा।

इतने में युधिष्ठिर अपना कवच उतारकर हाथ के अब छोड़कर भीष्म को नमस्कार करके, रथ से उतरकर चुपचाप शत्रु सेना की ओर गया। यह देखते ही अर्जुन, भीम, नकुल सहदेव, कृष्ण, और कई राजा अपने रथों से उतरकर युधिष्ठिर के पीछे गये।

"कहाँ जा रहे हैं? क्यों जा रहे हैं? बिना कवच के शत्रु के बीच जाना खतरनाक है न?" भाइयों ने युधिष्ठिर से पूछा। परन्तु युधिष्ठिर बिना कोई जवाब दिये आगे बढ़ता गया।

कृष्ण इस प्रकार हँसा, जैसे वह युधिष्ठिर का उद्देश्य जान गया हो। "युधिष्ठिर, युद्ध के लिए, भीष्म, द्रोण, और कृपा, शल्य आदि की अनुमति लेने जा रहा है। इस तरह बड़ों की अनुमति पर युद्ध करना श्रेयस्कर है। यह वह जानता है।" कृष्ण ने कहा।





[चन्द्रवर्मा को देखकर राज-सैनिकों ने सोचा कि वह कोई बड़ा मान्त्रिक था। बूढ़े के पास से चन्द्रवर्मा ने काँसे के किले के मार्ग का नक्शा ले लिया। फिर वह सैनिकों के साथ रुद्रपुर पहुँचा। पुरवासियों ने चन्द्रवर्मा को देखते ही, "महामान्त्रिक की जय!" जयजयकार करके उसका स्वागत किया। बाद में...]

चन्द्रवर्मा जब राजमहल के पास पहुँचा तो, मुख्य द्वार के पास राजा शिवसिंह, मन्त्री, प्रमुख राजकर्मचारी उसका स्वागत करने आये। चन्द्रवर्मा के घोड़े पर से उतरते ही राजा ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर बड़ी आत्मीयता से कहा-"चन्द्रवर्मा, इतनी छोटी उम्र में ही तुम इतने बड़े मन्त्रवेत्ता हो गये हो। तुम जैसे इस जमाने में नहीं हैं। हमारे राज्य में रहकर महादुष्ट शंख को तुमने मारा, यह जान कर हमारी प्रजा बड़ी खुश हुई। हम भी बहुत खुश हुए।"

राजा शिवसिंह के यह कहते ही चन्द्रवर्मा को बड़ा अचरज हुआ। पर उसने अपना आश्चर्य प्रकट न किया। मुस्कराते हुये उसने कहा-"यह शंख बड़ा दुष्ट था। महा पापी। इसीलिए ही उसको यमपुरी भेजना पड़ा।"



"वर्मा, उस मान्त्रिक को मारकर तुमने हमारे राज्य का बड़ा उपकार किया है। शंख के पहाड़ पर इस समय जो तुम्हारा मित्र, कालकेतु रह रहा है, उससे मैंने सबकुछ तुम्हारे बारे में मालूम कर लिया है। उसी की सलाह पर मैं तुमसे काँसे के किले तक जाने की प्रार्थना करने आया हूँ। इसीलिए ही मैंने अपने सैनिकों द्वारा तुम्हें यहाँ निमन्त्रित किया है। तुम्हारा स्वागत करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है।"

"काँसे का किला? वह तो बायें हाथ का खेल है।" चन्द्रवर्मा मुस्कराया। इतने में मन्त्री ने राजा के कान में कुछ कहा।

राजा ने तुरन्त चन्द्रवर्मा के कन्धे से हाथ हटा लिया। महल की ओर चलते हुये कहा-"चन्द्रवर्मा! तुम सफर के कारण थक गये होंगे। खा पीकर आराम करो। फिर फुरसत से बातचीत करेंगे।"

चन्द्रवर्मा के रहने के लिए राजमहल में ही प्रबन्ध किया गया। स्नान समाप्त होते ही उसको तरह तरह के पकवान परोसे गये। फिर चन्द्रवर्मा ने बड़े बड़े गद्दोंवाले पलङ्ग पर सोना चाहा, पर उसे नींद न आई। शंख पर्वत पर रहनेवाले कपालिनी व कालकेतु से शिवसिंह ने मेरे बारे में सब कुछ मालूम कर लिया है। कालकेतु ने शिवसिंह से क्यों कहा कि मैं अकेला ही काँसे के किले तक जा सकता था। इसमें क्या रहस्य है?

जब उसने इस विषय पर कुछ देर सोचा, तो उसे मालूम हो गया कि क्यों कालकेतु ने यह कहा था। फिर राज्य पाने के लिए धन और सेना की जरूरत है। इसके लिए काँसे के किले में रखी धनराशि बहुत सहायक होगी, उसका शायद यह विचार रहा होगा।

चन्द्रवर्मा अभी यह सोच रहा था कि राजा के प्रधानमन्त्री ने आकर कहा कि राजा उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। चन्द्रवर्मा जब उसके पास गया, तो राजा और प्रधानमन्त्री ने आदरपूर्वक सामने का आसन दिया।



"चन्द्रवर्मा! मुझे काँसे के किले में रखे धन का लालच नहीं है। मैं यह तुझे पहले ही बता देना चाहता हूँ।" राजा शिवसिंह ने मुस्कराते हुए साफ साफ कहा।

चन्द्रवर्मा ने कुछ न कहा। बस, सिर हिला दिया।

"फिर यह पूछा जा सकता है कि मैं काँसे के किले के बारे में क्यों यों पागल-सा हूँ। इसका उत्तर अजीब हो सकता है, पर विल्कुल सच है। यह तो तुम जानते ही हो कि यह काँसे का किला समुद्र के किनारे है।" राजा ने कहा।

"हाँ, पश्चिमी समुद्र तट पर। पिछले हजार सालों से किसी आदमी ने उसे नहीं देखा है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

यह सुनते ही मन्त्री को आश्चर्य हुआ। उसने राजा की ओर देखा। राजा ने सिर हिलाकर कहा-"हाँ, हो सकता है। कई का विश्वास है कि उस काँसे के किले की एक तरफ की दीवार समुद्र से सटी हुई है। ठीक है न?"

"यह मैने भी सुना है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"हमारे पूर्वजों का विश्वास था कि उस दीवार से सटे समुद्र में काँसे के घड़ों में कुछ सुन्दर प्राणियों को एक मान्त्रिक ने कैद कर रखा है। मेरे पिताने उनके लिए बहुत प्रयत्न किया। पर वे सफल न हो सके। तुम्हारे मित्र कालकेतु के, जो जब चाहे आदमी हो

सकता है, और जब चाहे कालसर्प हो सकता है, कहने से मुझे आशा होने लगी है कि तुम इन काँसे के कलशों को हमारे पास ला सकोगे।" राजा शिवसिंह ने कहा।

यह सुनते ही चन्द्रवर्मा ताड़ गया कि दाल में कुछ काला था। उन काँसे के कलशों के लिए, जिनमें कहा जाता था, सुन्दर प्राणी थे, कोई इतना प्रयत्न न करेगा। शिवसिंह तो काँसे के किले का धन ही चाहता था। वह स्वयं उसे पा न सका और इस भ्रम में कि मेरे पास मन्त्रशक्ति है, वह मेरी सहायता चाहता है। अगर सचमुच काँसे के किले में धन मिला, तो उसे शिवसिंह के हाथ न लगने दूँगा। धोखे का जवाब धोखे से दूँगा, और उसे मैं स्वयं ले लूँगा। मुझे इसने समझ क्या रखा है, चन्द्रवर्मा ने सोचा। उसे इसका भरोसा भी था।

"मुझ जैसे मान्त्रिक तो यही चाहते हैं कि ऐसे कठिन कष्टसाध्य कार्य कर दिखायें। मैं काँसे के किले तक जाऊँगा। मेरे साथ कुछ सेना भेजनी होगी। उनमें देव नाम के नौजवान का होना आवश्यक



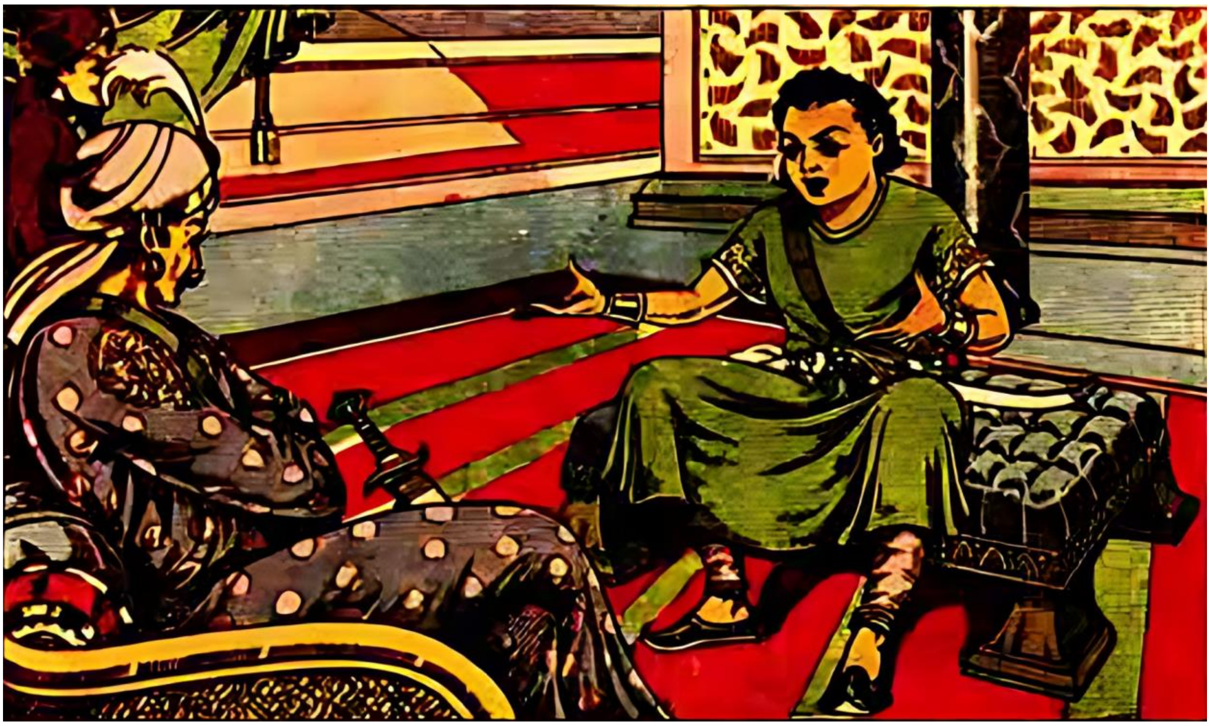
है।" कहते हुए चन्द्रवर्मा ने अपनी हथेली को गौर से देखा।

राजा शिवसिंह और मन्त्री ने एक दूसरे को देखा। कुछ देर बाद राजा ने चन्द्रवर्मा से कहा-"उस देव का बूढ़ा पिता जङ्गलों में फिर रहा है। क्या तुम उससे मिले?"

"कौन बूढ़ा! ओहो...." कहते हुए चन्द्रवर्मा ने अपनी हथेली पर और गौर से देखा। "वह जङ्गल में एक झोपड़े में रहता है। उसे सब सुविधायें दीजिये। अगर वह शहर में आकर रहना चाहे, तो उसके लिए सब व्यवस्था कीजिये। देखिये, उसे कोई कष्ट न हो। मेरा काँसे के किले तक पहुँचना उस बूढ़े और उसके लड़के देव पर बहुत कुछ निर्भर है।"

चन्द्रवर्मा के यह कहने पर न राजा ने न मन्त्री ने ही कोई विरोध किया। "अच्छा! जैसे तुम कहोगे, वैसे ही मैं करूँगा। देव को तुम साथ ले जा सकते हो। क्या तुम्हारे लिए हजार आदमी काफी हैं?" राजा ने पूछा।

यह सुन चन्द्रवर्मा जोर से हँसा। "मैं युद्ध के लिए कहीं नहीं जा रहा हूँ। अगर





कभी युद्ध करना पड़ गया तो वह अदृश्य रहकर, मेरे रास्ते में रोड़े अटकानेवाले दुष्ट शक्तियों से करना होगा। उसके लिए मेरी मन्त्र शक्ति के अतिरिक्त कुछ काम न आयेगा। आपके सैनिक तो कुछ भी न कर पायेंगे। मुझे चाहिये रसद ढोने के लिए कुछ गधे और उनको हाँकने के लिए कुछ आदमी। मेरे साथ दस आदमी हों, यही काफी है। यह जरूरी नहीं है कि वे सैनिक ही हो।"

"यह नहीं। अपने कर्मचारियों में, पाँच दस विश्वासपात्र बहादुर तुम्हारे साथ भेजूँगा। उनके साथ पचास सैनिक होंगे। हमारा राज्य पार करके जब तुम पश्चिम की घाटियों में प्रवेश करोगे, तब उस प्रान्त का राज्यपाल, वीरमल्ल, अगर तुम कुछ चाहोगे तो वह सब करेगा।" राजा ने रौब से कहा।

वीरमल्ल का नाम लेते ही चन्द्रवर्मा को अपना सेनापति धीरमल्ल याद आया। वह और विश्वासपात्र सुबाहू न मालूम कहाँ होंगे? उनको याद करके चन्द्रवर्मा ने लम्बा साँस छोड़ा।

"महाराज! जैसा आप उचित समझें वैसा कीजिये। मैं कल सवेरे निकल पड़ूँगा। काँसे के किले तक पहुँचने के लिए मुझे जङ्गल, पहाड़ और रेगिस्तान पार करने होंगे। रसद ढोनेवाले जन्तुओं को मुझे प्रदेश के अनुसार बदलना होगा। रेगिस्तान में यात्रा करते समय हमें ऊँटों की भी आवश्यकता हो सकती है। ये सब प्रबन्ध आपकी आज्ञा पर वीरमल्ल ही करें।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"वह सब में देख लूँगा। तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं।" राजा शिवसिंह ने कहा।

अगले दिन सवेरे चन्द्रवर्मा काँसे के किले की ओर निकल पड़ा। शिवपुर की सीमा तक राजा, मन्त्री और प्रजा उसे छोड़ने आये। उसके साथ मुख्य अनुचर के रूप में देव था। उसे पिछले दिन रात को ही जेल से छोड़ा गया था।

जङ्गलों में चन्द्रवर्मा आदि कुछ योजन दूर गये। बूढ़े का दिया हुआ नक्शा मार्ग पता लगाने के लिए विशेष उपयोगी न था। सिवाय घने जङ्गलों और ऊँचे पहाड़ों के, चन्द्रवर्मा को कहीं कोई आदमी दिखाई नहीं दिया। वह पश्चिम की ओर जा रहा था कि नहीं, रास्ते पर था कि नहीं, इसके लिए दो ही चिन्ह थे, वे थे सूर्योदय और सूर्यास्त।

इस प्रकार कुछ दिन यात्रा करने के बाद, एक दिन सूर्योदय के समय देव एक ऊँचे पत्थर पर से जोर से ताली बजाते हुए चिल्लाया-"यह देखो, हम किसी नगर के खण्डहर के पास पहुँच गये हैं। यहीं शायद काँसे का किला हो।"

उसके इस तरह शोर करते ही चन्द्रवर्मा और उसके साथवाले



राजकर्मचारी भागे-भागे देव के पास गये। और उस तरफ नजर दौड़ाई, जिस तरफ उसने ईशारा किया था। सामने, पहाड़ के नीचे एक महानगर के खण्डहर उन्हें दिखाई दिये। गिरी हुई दीवारें, एक तरफ झुकी छतें, जो गिरती-सी लगती थीं। दीवारों के बीच में पेड़-पौधे, उस प्रदेश को देखकर भय पैदा होता था।

"यह काँसे का किला नहीं है। फिर भी खण्डहरों का देखना हमारे लिए आवश्यक है। मेरे साथ आओ।" चन्द्रवर्मा यह कहकर चट्टान से उतरकर खण्डहर की ओर चल पड़ा।

जब सब मिलकर वहाँ गये, तो एक गिरे हुए मकान के सामने उन्हें शेर के तीन बच्चे दिखाई दिये। वे चन्द्रवर्मा और उसके साथियों को देखकर गुर्राते हुए पत्थरों के पीछे भाग गये। फिर उन्हें शेर का गरजना सुनाई दिया।

यह गर्जन सुनते ही चन्द्रवर्मा ने कहा-"हमारा इस मकान के पास जाना श्रेयस्कर नहीं है, हम किसी और तरफ चलें।" उसने यह कहकर रास्ता दिखाया।

खण्डहर पाँच-छ: मील के दायरे में थे, पर उनको कहीं भी कोई आदमी नहीं दिखाई दिया। वहाँ हर मकान खण्डहर था। कई तो ऐसे लगते थे, जैसे जल जला गये हों। उन मकानों में, जहाँ कभी मनुष्य रहे होंगे, अब चीते, जङ्गली सूअर, जङ्गली पशु रह रहे थे।

चन्द्रवर्मा जब नगर के बीच में पहुँचा, तो उसे एक ऊँची शिला दिखाई दी। उस पर कुछ अक्षर खुदे हुए थे, जो मिट मिटा गये थे। चन्द्रवर्मा ने शिला के पास जाकर एक एक अक्षर जोड़कर उसे पढ़ा। उसमें यह लिखा था।

"यह करवीरपुर है। यह हजार वर्ष तक सम्पन्न रहा। इस नगर के उत्तर से, बर्बर नाम की जातिवाले आये और उन्होंने इसको लूटा। इसकी श्री सम्पदा को ले जाकर काँसे के किले में उन्होंने रखा।"

चन्द्रवर्मा ने यह पढ़कर अपने साथियों से कहा-"अब हमारे लिए समय व्यर्थ करना अच्छा नहीं। यहाँ सिवाय पत्थरों के कुछ नहीं है। यह काँसे का किला नहीं है। चलो, यहाँ से चलो।" सब फिर पश्चिम दिशा की ओर चलने लगे।

(अभी है)





योगीश्वर जम्बूक



विक्रमार्क फिर एक बार पेड़ के पास गया। शव उतारकर कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, क्या तुमने सोचा, जो तुम कर रहे हो, वह ठीक है कि नहीं? क्योंकि कई जम्बूक की तरह सदुद्देश्य से बुरे काम भी करते हैं। तुम्हें चलते चलते थकान न हो इसलिये एक कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

किसी जमाने में हिरण्य पर्वत पर योगियों का एक आश्रम था। उसमें, लगभग हजार योगी कुटियायें बना कर रहा करते थे। कुछ समय तक राजा इस आश्रम का निर्वहण करता रहा। फिर देश में अराजकता फैली और आश्रम का

पोषण न हो सका। आश्रम के पशु कमजोर हो गये। आश्रमवासियों को चीथड़े पहनने पड़े। योगियों के गुरु ने कई तरह से सहायता पाने का प्रयत्न किया; पर किसी ने आश्रम की सहायता न की।

उस आश्रम की गौवों की देखभाल करनेवाला जम्बूक नाम का एक व्यक्ति था। छुटपन में ही उसके माँ बाप मर गये थे । कुछ समय तक उसकी दादी ने उसको पाला पोसा, फिर वह भी मर गई। उसके बाद वह बिल्कुल अनाथ हो गया।

मारा-मारा वह इधर उधर फिरा करता। योगियों के गुरु ने उसे देखा। और उसे आश्रम में लाकर गौवों को देखने की जिम्मेवारी उसको दी। तब से जम्बूक आश्रम में ही रहने लगा। पशुओं की देख भाल करता, भगवान की प्रार्थना करता समय काटने लगा।

आश्रमवासी जिन आर्थिक कठिनाइयों का सामना का रहे थे उन्हे जम्बूक भी देखता आया था। उसे एक दिन एक उपाय सूझा। उसने गुरु के पास जाकर कहा- "गुरुजी, आर्थिक कठिनाइयाँ



दूर करने के लिए एक काम मुझे सूझ रहा है।

"क्या है वह?" गुरु ने पूछा।

"मेरी दादी एक चीज पकाकर बनाया करती थी। उसे अमृतसार कहा करते थे। बहुत से धनी उससे वह अमृतसार बनवाया करते थे। भी इस काम में मैं उसकी मदद किया करता। हम दोनों शहर के बाहर जाकर तरह तरह की बूटियाँ बटोरकर लाते। वे सारी बूटियाँ जिस पहाड़ पर हमारी गौवें चरने जाती हैं, वहाँ हैं। मैं उन्हें रोज देखता रहता हूँ। अब मेरा यह विचार है कि यदि हम उन बूटियों को इकट्ठा करके, अमृतसार बनाकर बेचेंगे तो हमें किसी की सहायता की अवश्यकता न रहेगी।" जम्बूक ने गुरु से कहा।

"क्या तुम्हें अब भी याद है कि अमृतसार कैसे बनाया जाता है?" गुरु ने पूछा। जम्बूक ने कहा कि उसको अच्छी तरह याद था। तुरन्त बड़े बड़े योगियों की सभा हुई और उन्होंने आश्रम में अमृतसार बनाने का निश्चय किया।





पशुओं की देखभाल का काम किसी और को सौंप कर जम्बूक अमृतसार बनाने के काम में लग गया। इस काम के लिए आश्रम से कुछ दूरी पर एक कुटिया बनाई गई। उस में सिवाय जम्बूक के कोई नहीं जा सकता था। वहाँ उसने भट्टी बनायी। जरूरी बूटियाँ वह स्वयं इकठ्ठा करने लगा। जल्दी ही कढ़ाई में अमृतसार तैयार हो गया। उसका स्वाद चखकर जम्बूक ने गुरु के पास जाकर कहा-"गुरु जी अमृतसार तैयार हो गया है। अच्छा बना है।"

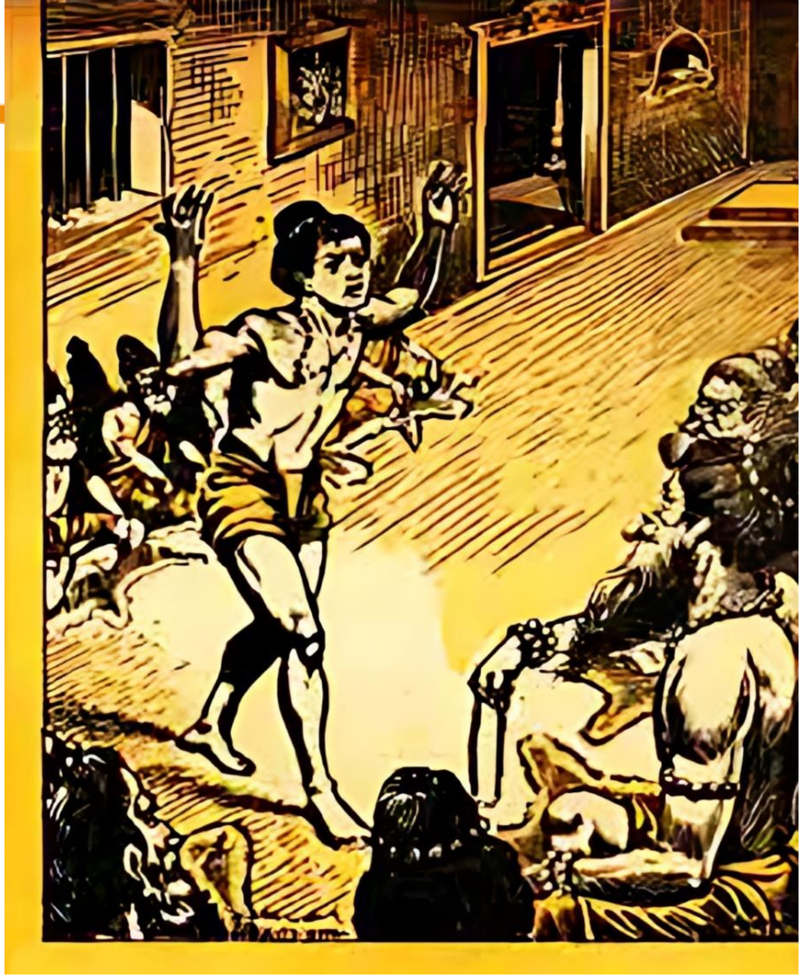
बड़े योगियों ने मिलकर हिसाब लगाया। उन्होंने निर्णय किया कि उसका मूल्य उसके बनाने के कीमत से दस गुना हो। अमृतसार को चार बोतलों में रखकर चार अमीरों के पास उन्होंने भेजा। उन अमीरों ने उस तरह के पेय का स्वाद कभी न चखा था।

अमृतसार जल्दी ही घर घर में मशहूर हो गया। वह अमृतसार, जो दिन में दस बोतल विकता था, अब सौ बोतलों में बिकने लगा। ये सौ देखते देखते पाँच सौ हो गई। आखिर ऐसा भी समय आया जब कि हजार बोतलों के बिकने पर भी माँग बनी रहती। राजा से लेकर मध्यम श्रेणी के लोगों के घरों में दो दो तीन तीन, अमृतसार को बोतलें रखी जाने लगीं।

हर त्यौहार, उत्सव, विवाह आदि, शुभ कार्यों पर अमृतसार अधिक खर्च होता।

आश्रम पर सोने की वर्षा सी होने लगी। वहाँ कुटियायें तोड़ दी गई और उनकी जगह बड़े बड़े मकान बनाये गये। अब आश्रम में दो हजार गायें थीं। सब के पास पहनने के लिए कपड़ा था और पेट भर खाना था।

अमृतसार बनाने के लिए अब एक बड़ा मकान तैयार किया गया। बूटियाँ इकट्ठी करने के लिए तीस आदमियों को वेतन पर रखा गया। परन्तु भट्टी के पास का काम जम्बूक को ही करना पड़ता। कितना किस चीज़ को पकाना चाहिये था, यह वह ही जानता था। यद्यपि वह रोज भट्टी के पास ही रहता था तो भी बड़े योगियों ने उसको अपने समान बना दिया।



एक दिन प्रार्थना के समय प्रार्थना स्थल पर जम्बूक झूमता आया-"ऐ! तुम सब क्या कर रहे हो?" वह जोर से चिल्लाया।

"लगता है, हमारे जम्बूक योगी को कोई हवा लग गई है। उसे ले जाओ।" गुरु ने कहा। अगले दिन सवेरे जम्बूक गुरु के पास गया, उसके पैरों पर पड़कर उसने कहा- "गुरु जी, मुझे क्षमा कीजिये। यह अमृतसार बहुत खराब है। उसी के असर में मैंने कल असभ्यों का सा व्यवहार किया था। आप लोगों की सङ्गति में, आप की सहायता से आत्मनिरीक्षण में समय बिताने के बदले में रोज उस खराब पेय को तैयार करके नरक के मार्ग पर चल रहा हूँ। मुझे मेरी गायें दे दीजिये।"

गुरु ने बड़े बड़े योगियों को बुलाकर उनको जम्बूक की बातें बताई।

"हे जम्बुक योगीश्वर। इस अमृतसार को सिवाय तेरे और कोई नहीं तैयार कर सकता है। गौवों को तो और भी देख सकते हैं। अब तुमने अमृतसार बनाना छोड़ दिया तो हमें कितनी ही कठिनाइयाँ उठानी पडेंगी। तुम जरा उन दिक्कतों को

तो याद करो जिन्हें हमें झेलना पड़ा था।" बड़े योगियों ने कहा।

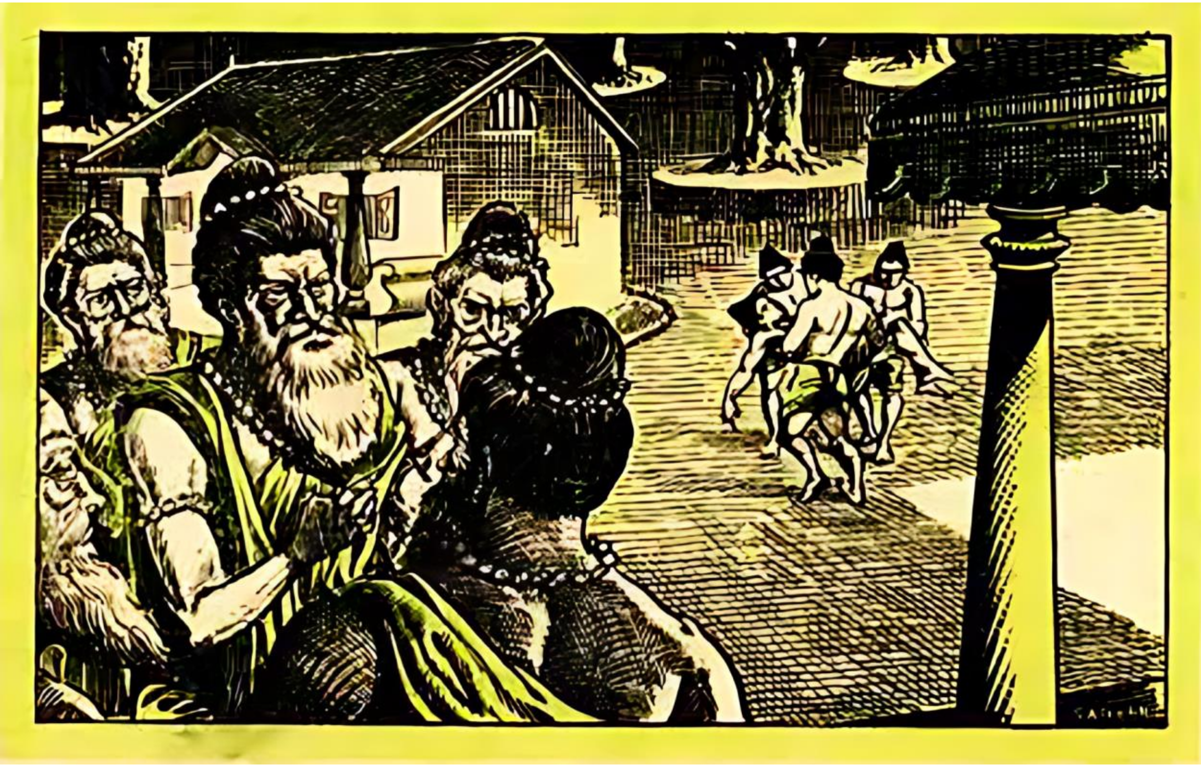
गुरु ने जम्बूक की ओर मुड़कर पूछा-"अगर तुम अमृतसार को बनाते भी हो तो उसको पीने की क्या जरूरत है?"

"गुरु जी, चीजें ठीक अनुपात में पड़ी हैं कि नहीं, यह तो देखा जा सकता हैं। पर वे ठीक पकी हैं कि नहीं, यह तो चख कर ही जाना जा सकता है। इसीलिये भट्टी से उतरने के बाद मुझे अमृतसार चखना होता है।" जम्बूक ने कहा।

"यही है, तो पाँच दस बूँद चखकर देखो। इतना तो कोई हानि नहीं करेगा।" गुरु ने कहा।

जम्बूक ने सिर हिलाकर ठीक कहा। योगियों ने सोचा कि एक बड़ी आफत टल गई थी।

थोड़ा समय और बीता। जब रात को प्रार्थना हो रही थी तो जम्बूक कुछ गन्दे गाने गुनगुनाता बीच बीच में जोर से हँसता आया। उसने खूब पी रखी थी। कुछ लोगों ने घर ले जाकर उसे सुलाया। तभी गुरु ने बड़े योगियों



को बुलाकर विचार विमर्ष किया। "चाहे कुछ भी हो, आसमान गिरे या जमीन उड़े हमें यह अमृतसार बनाना ही होगा।" उन लोगों ने कहा।

अगले दिन सवेरे जम्बूक ने फिर गुरु के पैरों पर पड़कर कहा- "गुरुजी, आप ही को मुझे नरक से बचाना होगा। अब मैं कुछ भी हो मट्टी के पास नहीं जाऊँगा। इसके लिए में उत्तम लोकों को नहीं खो सकता।"

"अब क्या हो गया है भाई? कहा तो था, अमृतसार की दो तीन बूँदे ही चखना। वैसे ही कर रहे हो न?" गुरु ने इस तरह पूछा, जैसे कुछ जानता ही न हो।

"जब बीस बूँद चख लूँगा, तो क्या वह मुझे छोड़ेगा? उसकी गन्ध ही पतन के लिए पर्याप्त है। उसको देखना पाप है। इसलिए मुझे और कोई काम दिलवाइये।" जम्बुक ने कहा।

"पगले। डरो मत। हम जब प्रार्थना कर रहे हों, उस समय तुम चाहो जो कोई भी पाप करो, वह तुम्हें न लगेगा। मेरे पास ऐसी योग-शक्ति है, जो तुम्हें कुम्भीपात नरक से भी ऊँचे लोकों में ले जा सकेगी।



इसलिए तुम निश्चिन्त होकर अमृतसार की सङ्गति में रहो।" गुरु ने कहा।

उसके बाद जम्बूक को पाप का भय ही न रहा। उसने सारा भार गुरु पर डाल दिया, और अमृतसार तैयार करने लगा। वह अन्धेरा होते होते खूब पी बैठता। परन्तु प्रार्थनास्थल पर न जाया करता। जहाँ नशा खूब चढ़ता, वहाँ जा गिरता। दूसरे उसको घर पहुँचाया करते। कालक्रम से सब योगी समाधि करके नरक पहुँचे। योगियों का गुरु जब नरक जा रहा था, तो उसने स्वर्ग में झाँककर जो देखा तो, कल्पवृक्ष के नीचे उसे जम्बूक दिखाई दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"वे योगी, जो एक भी पाप न करते थे नरक क्यों गये, जब कि खूब पीनेवाला जम्बूक स्वर्ग गया? इसका क्या कारण है? अगर इस प्रश्न का जान बूझकर जवाब न दिया तो तेरा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"जम्बूक ने पिया तो सही, पर उसने आश्रम के नियमों का, गुरु के आदेश का उल्लंघन करके कभी पाप न किया। उसका मन हमेशा उत्तम लोकों पर ही रहा। परन्तु बाकी योगियों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता। उनका मन हमेशा धन पर ही रहता। उन्होंने उत्तम लोकों के बारे में कभी नहीं सोचा। इसीलिए वे नरक गये। जम्बूक ने कमजोरी की वजह से पिया था, पर वह सदा यह जानता था कि पीना खराब था। इसीलिए वह स्वर्ग गया।"

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





आदर्श प्रेमी

वेरोना नगर में दो बड़े परिवार थे। उन दोनों में बहुत ही झगड़ा था। उन परिवारों के लोग ही नहीं, उनके दूर के सम्बन्धी भी, यहाँ तक कि नौकर भी, जब मौका मिलता लड़ने के लिए तैयार हो जाते। कई बार तो, आम सड़कों पर खून खराबी होती। यह झगड़ा जाने कब से चला आ रहा था।

उन परिवारों में से एक परिवार में जुलियट नाम की लड़की थी। वह बहुत ही सुन्दर थी। वह अपने पिता की इकलौती थी, और एक बड़ी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी थी। दूसरे परिवार में रोमियो था। उसने रोजलीना नाम की कन्या से प्रेम किया। पर उसने उसका प्रेम ठुकरा दिया। वह खाना पीना छोड़कर दीवाना-सा हो गया।

जूलियट के पिता ने एक बड़ी दावत दी, उसमें सिवाय रोमियो के परिवार के, वेरोना नगरवासी सब सपरिवार निमन्त्रित थे। उस दिन मनोरञ्जन की भी व्यवस्था थी।

रोमियो के बोन्वोलियो नाम के एक मित्र ने उससे कहा-"वेरोना नगर में कई लड़कियाँ ऐसी हैं, जो रोज़लीना से कई गुना सुन्दर हैं। अगर आज हम वेष बदलकर दावत में गये तो उन सबको देख सकेंगे।"

और लड़कियों की बात अलग रोज़लीना को तो देख ही सकेंगे, यह सोचकर रोमियो जाने के लिए मान गया। सच कहा जाय तो उसे पतिपक्षियों के प्रति कोई द्वेष न था। वह बोन्वोलियो और मेर्कुषियो नाम के एक और मित्र को

लेकर, आँखों पर पट्टी बाँधकर गया। दावत में नाचनेवाले ऐसी पट्टियाँ बाँधकर जाया करते थे।

जब नृत्य हो रहा था रोमियो ने पहली पहली बार जूलियट को देखा और उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो गया। वह उससे प्रेम करने लगा। नृत्य के समाप्त होने पर वह जूलियट के पास गया, उसका हाथ पकड़ कर उसने कहा कि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। पर यह न बताया कि वह कौन था।

किन्तु रोमियो का रहस्य छुप न सका। जूलियट के एक बन्धु टेबाल्ट ने उसकी आवाज पहचान ली। वह तलवार लेकर रोमियो की ओर लपका। परन्तु जूलियट के पिता ने उसको रोककर कहा-"जब इतने लोग उत्साह से मनोरञ्जन कर रह हैं, तब रक्तपात करके उनका आनन्द भङ्ग न करो।" परन्तु टेबाल्ट ने शपथ की-"फिर कभी यह रोमियो दिखाई देगा तो उसकी जान निकाल दूँगा।"

आधी रात के समय दावत खतम हुई, और अतिथि पर जाने लगे। रोमियो भी बाहर आया, पर उसके प्राण जुलियट पर ही थे। उससे दूर होना उसके लिए



असम्भव हो रहा था। वह जूलियट के घर के पिछवाड़े में गया। वहाँ की चार दिवारी फाँदकर बाग में पहुँचा।

थोड़ी देर बाद जूलियट एक छज्जे में आकर खड़ी हुई। जूलियट के बारे में जिस प्रकार रोमियो, सोच रहा था, उसी तरह जूलियट भी रोमियो के बारे में सोच रही थी। "रोमियो! तुम मेरे शत्रु कुल में क्यों हुये? मेरे लिए ही कम से कम दूसरे आदमी क्यों नहीं हो गये?" उसको इस तरह अपने आप में बातें करता सुन रोमियो फूला न समाया।

उसके पास जाकर रोमियो ने बातें छेड़ी। वह घबरा गई। "मगर तुमको हमारे लोगों ने देखा तो ये मार देंगे।" उसने कहा।

"मारने दो! उनकी तलवारों से अधिक तुम्हारी आँखों ने ही मेरी हानि की है।" रोमियो ने कहा।

वैसे ही एक दूसरे का प्रेम वे जान गये थे। इसलिये जूलियट ने भी अपना प्रेम छुपाने की कोशिश न की। "कल यदि तुमने नौकर द्वारा यह बता दिया कि हमारी शादी कहाँ और कब होगी, तो मैं तुम्हारी हो जाऊँगी।"





सवेरा होते ही रोमियो एक पुरोहित के पास गया। उसका नाम लोरेन्स था। वह रोमियो को बहुत चाहता था। रोमियो और जूलियट के कुटुम्बों में, जो पुश्त दर पुश्त झगड़ा चला आ रहा था, उसे बिल्कुल पसन्द न था। वह दोनों पक्षों का कुशल-क्षेम चाहता था।

जब रोमियो ने आकर बताया कि वह चुपचाप जूलियट से शादी करना चाहता था, तो उसने सोचा कि कम से कम इस तरह ही दो पुराने परिवारों का झगड़ा खतम हो सकेगा। इसलिए लोरेन्स ने उन दोनों का विवाह कराना स्वीकार कर लिया।

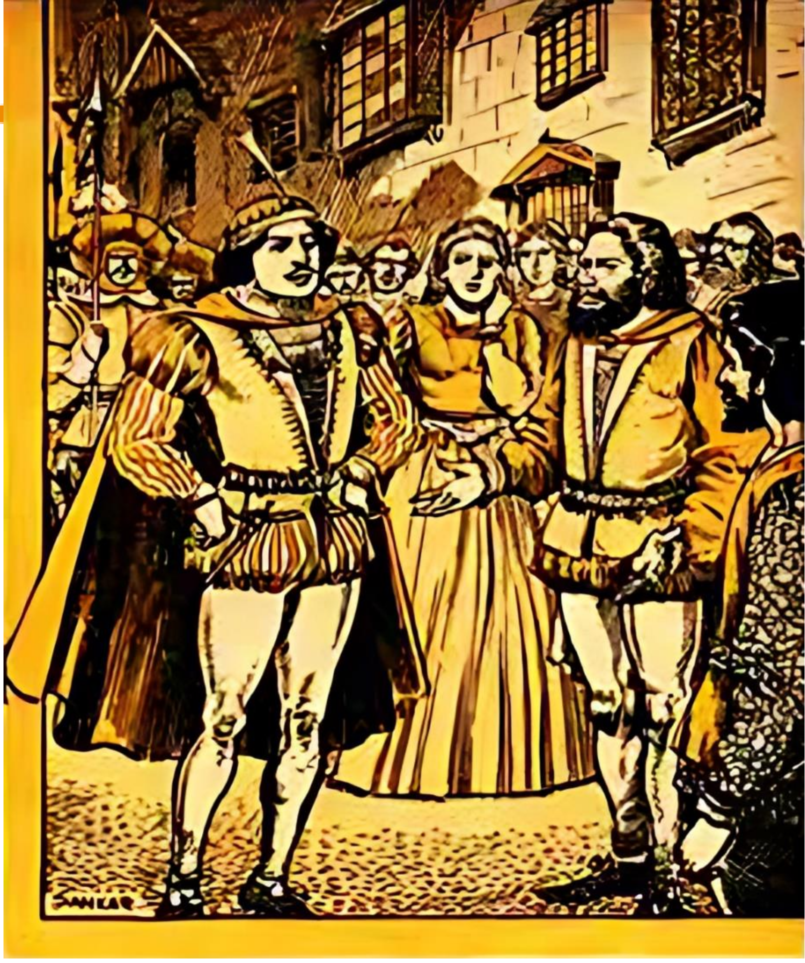
जूलियट के पास खबर पहुँची। वह लोरेन्स के रहने की जगह आई। लोरेन्स ने विधिपूर्वक उन दोनों की शादी की और उनको पति-पत्नी घोषित किया।

जूलियट अपने पिता के घर गई। और प्रतीक्षा करने लगी कि कब रात होती है और कब रोमियो आकर बाग में मिलता है।

जिस दिन रोमियो और जूलियट की शादी हुई थी, उस दिन दुपहर को एक दुर्घटना हुई। रोमियो के जब दो मित्र गली में जा रहे थे तो, जूलियट के बन्धु टेबाल्ट ने उनके सामने आकर मेर्कुषियो से कहा- "तुम्हें शर्म नहीं आती कि तुम रोमियो से दोस्ती करते हो?"

मेर्कुषियों ने बात का बात से जवाब दिया.... बात बात में लड़ाई होने को ही थी कि रोमियो उस तरफ आया। तुरन्त टेबाल्ट ने रोमियो को बुरा भला कहा। क्योंकि रोमियो की जूलियट से उसी दिन शादी हुई थी; इसलिए उसने अपनी पत्नी के बन्धु से झगड़ा मोल लेना

न चाहा। उसने टेबाल्ट को मीठी मीठी बातें करके मनाने की कोशिश की। पर मेर्कुषियों को रोमियो की शादी के बारे में कुछ न मालूम था। उसने टेवाल्ट पर तलवार उठाई। उन दोनों को रोमियो और बोन्बलियो ने छुड़ाना चाहा। पर वे लड़ते रहे और लड़ाई में मेर्कूषियो को चोट लगी और वह मर गया।



मित्र की मृत्यु के कारण रोमियो को गुस्सा आ गया। उसने तलवार निकाली। इसी बीच इस झगड़े के बारे में सारे शहर में खबर फैल गई। वहाँ वेरोना का राजा, रोमियो और जूलियट के माँ-बाप और कई सारे लोग जमा हो गये।

जूलियट के परिवार वालों ने राजा से रोमियो को कठिन दण्ड देने की प्रार्थना की। रोमियो के परिवार वालों ने कहा-"मेर्कुषियों को मारने का कारण यूँ भी टेबाल्ट को मृत्यु की सजा मिलती। रोमियो ने क्योंकि उसे ही मारा था, इसलिए वह निर्दोष था।"

राजा ने किसी की भी बात न सुनी। रोमियो को आज्ञा दी कि अगले दिन सवेरा होने से पहले वह नगर छोड़कर चला जाय। अगर वह न गया तो उसको मौत की सजा दी जायेगी।

राजा ने जब यह आज्ञा दी तब रोमियो लोरेन्स के पास था। यह सुनते ही उसने कहा-"जहाँ जूलियट न हो, वह जगह मेरे लिए नरक है। वेरोना छोड़कर कैसे जाऊँ?"

लोरेन्स ने उसे आश्वासन देते हुए कहा-"तुम अपने भाग्य पर खुश होओ। युद्ध में तुम्हें टेबाल्ट ने नहीं मारा। उसको मारने के कारण राजा ने तुम्हें मौत की सजा न दी। तेरा भाग्य अच्छा है।"

"आज मैं जूलियट के साथ रात बिताऊँगा। सवेरा होते ही मान्डवा शहर चला जाऊँगा। मौका मिलने पर आप हमारे विवाह के बारे में बता दीजिये। यह जानकर हमारे परिवार पारस्परिक द्वेष छोड़कर शायद एक दूसरे के निकट आ जायें। तब सम्भव है राजा इस सजा को भी रद्द करें। तब मैं वापस आकर जूलियट के साथ सुखपूर्वक गृहस्थी कर सकूँगा।" रोमियो ने कहा।

रोमिया के वेरोना नगर छोड़कर चले जाने के बाद जूलियट के पिता ने एक अच्छे सम्बन्ध के बारे में बात उठाई। वर अच्छे, बड़े खानदान का था। नौजवान था। हर तरह से जूलियट के लिए ठीक था। जूलियट का पिता न जानता था कि उसकी शादी पहले ही हो चुकी थी।

पिता ने शादी के बारे में जब बताया तो जूलियट ने कहा कि अभी वह शादी के लायक न थी। उसने यह भी कहा कि टेबाल्ट की मृत्यु के बाद इतनी जल्दी विवाह की बात सोचना ठीक न था। कितनी ही आपत्तियाँ उठाई। उसकी बातें सुनकर पिता को गुस्सा आ गया। गुस्से में उसने



कहा-"अगले बृहस्पतिवार को तेरी शादी है। तैयार हो जाओ।"

जूलियट को कुछ न सूझा कि क्या करे। वह लोरेन्स के पास सलाह के लिए गई। "अगर तुमने एक छोटा-सा काम किया तो तुम इस शादी की आफत से बच जाओगी। क्या तुममें वह काम करने की हिम्मत है?" लोरेन्स ने कहा।

"अगर पति के लिए मरना भी हो तो मैं तैयार हूँ।" जूलियट ने कहा।

"तो तुम घर जाओ। शादी के लिए मान जाओ। खुशी से रहो। शादी से एक दिन पहले मैं जो दवा दूँ उसे पी लेना। तुम उसके असर के कारण बयालीस घण्टे मर-सी जाओगी, फिर उसके बाद इस तरह उठोगी, जैसे लम्बी नींद आई हो।" लोरेन्स ने कहा।

जूलियट ने साहस करके, लोरेन्स के कथानानुसार किया। पिता सन्तुष्ट हुआ कि वह उसके चुने हुये वर से शादी करने के लिए मान गई थी। बुधवार की रात को जूलियट ने लोरेन्स की दी हुई दवा पीली। शादी के दिन सवेरे जूलियट को देखकर उसके बन्धुओं ने सोचा कि वह



मर गई थी। विवाह के लिए जो जोश था, वह मातम में बदल गया। उस पुरोहित को जो शादी कराने आया था, अन्त्येष्टि संस्कार कराना पड़ा। उसको कब्रिस्तान ले जाकर उनके कुटुम्ब के समाधि गृह में रखकर वे चले गये।

लोरेन्स को जब पता लगा कि जूलियट ने उसकी दी हुई दवा पी ली थी तो रोमियो के पास उसने आदमी भेजा, और उसको सब कुछ बताया। परन्तु उस आदमी के पहुँचने के पहले ही रोमियो को जूलियट की मृत्यु का समाचार मिला।

उसने तुरन्त एक हकीम को बहुत सा धन दिया और उससे एक विष लेकर, वायु गति से बेरोना आया। सीधे समाधि के पास गया। उस समय वहाँ नया वर भी आया। दोनों में तलवारों से झगड़ा हुआ। नया वर मारा गया। दूर से यह सब एक नौकर देख रहा था। उसने जाकर इसकी खबर जूलियट के पिता को दी।

इस बीच, रोमियो ने अपनी पत्नी को देखा। समझा कि वह सचमुच मर गई थी। उसे यह न मालुम था कि थोड़ी देर में ही यह उठनेवाली थी। इसलिये वह विष निगल गया और उसकी बगल में मर गया।

थोड़ी देर बाद जूलियट उठी। अपने पति का शव देखा। उसने एक कटार लेकर आत्महत्या कर ली। और इस तरह वह अपने पति से जा मिली।

जब तक सब भागे मागे आये तब तक सब खतम हो चुका था। उनके परस्पर विद्वेष और विरोध के कारण ही रोमियो और जूलियट की अकाल मृत्यु हुई थी यह जानकर बड़े बुजुर्गों को अक्ल आई। इतनी सारी नर बलियों के बाद उन दोनों परिवारों में मैत्री हुई।





ग्रीस देश में एक राजा था। उसकी एक ही एक लड़की थी। वह ज्योतिषियों से पूछा करता कि उसके बाद राज्य करने के लिए उसके लड़का होगा कि नहीं। उन्होंने बताया कि लड़का न पैदा होगा। और उसकी लड़की का लड़का उसकी मौत का कारण होगा।

यह सुन राजा को डर लगा। उसने एक पत्थर का ऊँचा बुर्ज बनवाया। उसमें न खिड़की थी न दरवाजे ही। उस पर कोई चढ़ न सके, इसलिए उस पर काँसा मढ़वा दिया गया। राजकुमारी को उसमें रखा। एक छेद में से रोज उसे खाना पहुँचाया जाता। दिन रात पहरा रहता। राजकुमारी का संसार से कोई सम्बन्ध न था। परन्तु वहाँ आकाश, पक्षी, धूप और चान्दनी दिखाई देते थे।

कुछ दिन बीत गये। राजकुमारी समानी हुई। उसे एक रोज़ अजीब सपना आया। उसने बुर्ज से जो ऊपर देखा, तो उसे सोने का बादल दिखाई दिया। उस में से सोने की वर्षा उस पर पड़ी। उसके नौ महीने बाद उसके एक लड़का हुआ।

पहरा देने वालों को बुर्ज में किसी बच्चे का रोना सुनाई दिया। उन्होंने जाकर राजा से यह बात कही। उसने अपनी लड़की और पोते को बुर्ज में से निकलवाया। उन दोनों को जीते जी मार देने का उसे साहस नहीं हुआ। उसने एक लकड़ी का सन्दूक बनवाया। उन दोनों को उसमें रखा गया। उसे समुद्र में फेंक दिया गया। इस तरह वे दोनों मर जायेंगे और उस पर हत्या का दोष भी न लगेगा, उसका विचार था।

बलदेव



परन्तु, जैसा उसने सोचा था वैसा हुआ नहीं। वह सन्दूक एक दिन और एक रात समुद्र मैं तैरता रहा, फिर एक द्वीप के किनारे जा लगा। उस द्वीप के राजा का भाई मछियारा था। माँ, बेटे का यह सन्दूक उस मछियारे को मिला। उसे राजकुमारी की कहानी सुनकर दया आई। वह उसे और उसके लड़के को घर ले गया। लड़के का नाम उसने पेर्सियस रखा।

राजकुमारी के कष्ट अभी दूर न हुये थे। उसके बारे में जानकर उस द्वीप के राजा ने उससे विवाह करने का प्रयत्न किया।

यह जानकर कि वह बहुत क्रूर था, राजकुमारी ने उससे शादी करने से इनकार कर दिया।

पेर्सियस बड़ा हुआ। एक दिन राजा ने अपने राज्य के नौजवानों को दावत दी। दावत के लिए जो जो गये वे राजा के लिए घोड़े, सोना, अच्छे अच्छे कवच, बाण आदि ले गये। पेर्सियस गरीब था। वह कुछ न के जा सका। राजा ने उससे पूछा-"खाली हाथ क्यों आये? कम से कम एक घोड़ा तो लाते!" सब हँसे।

"घोड़ा? अच्छा होता भयङ्कर सिर लाने के लिए अगर कहते। ला देता।"

"खैर, क्या हो गया? अब माँगता हूँ। भयङ्कर सिर ला दो। उसको बिना लाये मेरे पास फिर न आना।" राजा ने कहा। फिर सब हँसे।

पेर्सियस का अपमान हुआ। उसने, गम्भीरता से कहा-"अच्छा, ला दूँगा।" फिर वह वहाँ से समुद्र के किनारे गया। एक जगह बैठा अपनी गरीबी पर सोचता रहा और सोचता सोचता वहीं सो गया। नींद में उसे लगा जैसे कोई कह रहा हो-"अगर तुम सचमुच भयङ्कर सिर

लाना चाहते हो, तो जो मैं कहता हूँ, उसे गौर से सुनो। तुम अगर पश्चिमी देवताओं के पास गये तो वे तुम्हें भयङ्कर सिर के पास जाने का मार्ग बतायेंगे। पश्चिमी देवताओं के पास पहुँचनेवाले रास्ते के बारे में बताने वाली तीन बुढ़ियायें हैं। वे उत्तर में रहती हैं।"

यह सुनते ही पर्सियस उठ खड़ा हुआ। आस-पास तो कोई न था। पर सपने की बातें उसे अच्छी तरह याद थीं। अगर उसने उस सलाह पर काम किया तो उसे भयङ्कर सिर मिल सकेगा, यह आशा उसके मन में बुलबुलाने लगी। पेर्सियस ने यह सिर लाने का प्रण किया। घर जाकर उसने अपनी माँ से यह बात न कहकर, कहा कि वह देश भ्रमण के लिए जा रहा था। वह उससे विदा लेकर चला गया।

परन्तु इस भयङ्कर सिर का मतलब ही क्या है? कहीं तीन बहनें रहती थीं। वे भयङ्कर राक्षसियाँ थीं। उनके सिर के बालों की जगह साँप थे। उनके लम्बे लम्बे फण और काँसे के हाथ थे। उनमें भयङ्कर नाखून थे। उनमें से एक का सिर भयङ्कर



सिर के रूप में प्रसिद्ध था। इसका कारण यह था कि अगर कोई उस सिर को देखता, तो वहीं पत्थर का हो जाता। इस भयङ्कर सिर के बारे में हर कोई जानता था।

बह उत्तर की ओर गया। और उस जगह गया, जहाँ तीन बुढ़ियायें रहती थीं। ये बुढ़ियायें भी बड़ी खराब थीं। अन्धी थीं। इन तीनों की कुल मिलाकर एक ही आँख थी। वह जिसके पास होती, वह ही देख पाती। जब यह आँख एक दूसरे को दे रही थी, पर्सियस ने वह आँख ले ली।

"हमारी आँख किसी ने चुरा ली है। अब हम नहीं देख सकतीं।" बुढ़ियायें शोक करने लगीं।

"तुम्हारी आँख मेरे पास है। अगर तुमने पश्चिमी देवताओं के पास जाने का रास्ता बताया तो तुम्हें यह दे दूँगा। नहीं तो तुम अन्धी रहोगी।" पर्सियस ने कहा।

और कोई चारा न था। उन्होंने पश्चिमी देवताओं के यहाँ जाने का रास्ता बताया। पर्सियस ने आँख उनको दे दी। उनके बताये हुए रास्ते पर जाता जाता पश्चिमी देवताओं के पास पहुँचा।

पश्चिमी देवताओं ने उसका आदर-सत्कार किया। उसे यह भी बताया कि भयङ्कर सिर के कारण क्या क्या आपत्तियाँ आ सकती थीं। उनसे बचने के लिए उन्होंने आवश्यक साधन भी दिये। इन में जादू की चप्पल, जादू की तलवार, जादू की टोपी और जादू की थैली भी थी।

"इन चप्पलों के पहनने से, तुम चाहो जितनी तेजी से, चाहो जहाँ जा सकते हो। यह जादू की तलवार एक ही चोट में किसी भी चीज़ को काट देती है। जादू की टोपी तुम्हें अदृश्य रखेगी। भयङ्कर



सिर को काटकर जादू के थैले में रखना। अगर तुमने सामने से उस राक्षसी को देखा तो तुम पत्थर हो जाओगे। इसलिए शीशे की तरह चमकनेवाले ढाल में उसे देखकर उसका सिर काट देना। अपना काम खतम करके हमारे साधन, एक थैले में अगर पहाड़ पर रख दिये, तो वे हमारे पास आ जायेंगे।" पश्चिमी देवताओं ने कहा।

पर्सियस उनसे बिदा लेकर जादू की चप्पलों की महिमा के कारण तेजी से उन बर्फीले पहाड़ों की ओर चल पड़ा, जहाँ वे राक्षसियों रहा करती थीं। उसने जादू की टोपी पहन रखी थी, ताकि वह अदृश्य रहे। और ढाल में पड़नेवाली परछाई को देखता तलवार लिए तैयार था।

थोड़ी देर में वह तीन राक्षसियों की जगह पहुँचा। उस समय वे तीनों सो रही थीं। भयङ्कर सिरवाली राक्षसी बीच में सोई हुई थी। पेर्सियस ढाल में देखता, उसके पास गया, और एक ही चोट से उसका सिर काटकर थैले में रख लिया।

कुछ आहट हुई और बाकी दोनों राक्षसियाँ उठकर उसका पीछा करने लगीं। उसकी रक्षा जादू की चप्पलों ने नहीं की।





जितना तेज वे जा सकते थे, ये राक्षसियाँ भी भाग सकती थीं। परन्तु चूँकि उसके सिर पर जादू की टोपी थी, इसलिए वह अदृश्य था और राक्षसियाँ उसे देख न सकीं।

जैसे तैसे भयङ्कर सिर को लेकर जादू की चप्पल की मदद से जब तेजी से वह आकाश में उड़ा जा रहा था तो पर्सियस को एक आश्चर्य दिखाई दिया। ठीक उसके नीचे समुद्र का किनारा था। उसके पीछे ऊँचे पहाड़ थे। एक नोकीले सिरे पर, जो समुद्र में चला गया था, उसे एक सफेद स्त्री का रूप दिखाई दिया।

उसे मूर्ति जान उसे देखने के लिए पर्सियस नीचे उतरा, उसने देखा कि वहाँ एक युवती खड़ी थी। उसने आश्चर्य से पूछा-"यहाँ यों क्यों खड़ी हो? तुम्हें इन जञ्जीरों से जकड़ क्यों रखा है?"

"मैं इस देश की राजकुमारी हूँ। मेरी माँ को यह घमण्ड है कि वह बहुत सुन्दर है। एक बार उसने शेखी मारी कि वह समुद्र की देवियों से भी अधिक सुन्दर थी। यह सुन समुद्र की देवियों ने हमारे देश में समुद्री राक्षसी को भेजा। वह राक्षसी रोज एक एक आदमी को ले जाकर खाती है।" राजकुमारी ने कहा।

"डरो मत! मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।" कहकर, पेसियस समुद्री राक्षसी को मारने के लिए तैयार होने लगा। जल्दी ही समुद्र के ऊपर से राक्षसी आई। पेर्सियस ने जादू की टोपी पहन ली। अदृश्य होकर उसने राक्षसी पर अपनी तलवार से कई प्रहार किये। राक्षसी घायल हो गई थी। फिर भी राजकुमारी की ओर आता देख थैले में से भयङ्कर सिर निकालकर उसे राक्षसी की ओर दिखा कर उसने स्वयं मुँह फेर लिया। तुरन्त वह राक्षसी पत्थर हो गई।

फिर पेसियस ने भयङ्कर सिर को थैले में रख दिया। राजकुमारी की जञ्जीरों को तोड़ दिया। "आओ! तुम्हारे माँ बाप के पास चलें।"

"नहीं, मुझे आप अपने साथ ले जाइये। आपकी दासी बनकर ही आपका ऋण चुकाऊँगी।" राजकुमारी ने कहा।

"तो हमारे ग्रीस देश में आकर मुझसे शादी करो।" पेर्सियस ने कहा। वह इसके लिए मान गई।

पर पिता को यह मञ्जूर न था कि उसकी लड़की किसी ऐरे गैरे से शादी करे। उसने अपने साले को उकसाया। "कुछ भी हो तुम इस सम्बन्ध को तोड़ दो और मेरी लड़की से तुम शादी कर लो।"

राजा का साला सेना के साथ आया। उसने पेर्सियस से कहा-"तुम राजकुमारी से शादी करने लायक नहीं हो। तुम उसे छोड़ दो, नहीं तो मुझसे युद्ध करो।"

"यह याद रखिये मैं वही हूँ जिसने समुद्र राक्षसी को मारा था। आप मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते।"



पेर्सियस ने कहा। परन्तु राजा का साला न माना। पेर्सियस ने भयङ्कर सिर दिखाकर उन सबको पत्थर बना दिया। वह फिर अपनी पत्नी के साथ माता के पास गया।

उसके वापस आने तक वहाँ बहुत-सी बातें हो गई थीं। राजा ने अपने भाई, मछिबारे को कैद कर लिया था और पेर्सियस की माता को अपने घर दासी बना रखा था। पेर्सियस ने उस राजा के पास जाकर कहा-"तुम मेरी माँ को तुरन्त छोड़ दो। तुम अपने अन्याय के लिए उसे थोड़ा सोना भी दो।"

"अरे, तुम, फिर आ गये? कौन है वहाँ? इस दुष्ट को पकड़कर कैद में ड़ाल दो।" राजा ने कहा।

"राजा, जरा ठहरो। मुझे तुमने एक चीज़ लाने के लिए भेजा था। वह ले आया हूँ, क्या देखकर खुश न होगे?" पेसियस ने पूछा।

"हाँ हाँ, भयङ्कर सिर लाने के लिए गये थे न? कहाँ है वह सिर?" राजा ने पूछा।

पेर्सियस ने थैले में से सिर निकालकर राजा के सामने रखा और स्वयं मुँह मोड़ लिया। राजा पत्थर हो गया। फिर उसने अपने संरक्षक पिता को जेल से छुड़ाया और उसको उस देश का राजा बनाया। तब पेसियस ने माँ के द्वारा अपने नाना के बारे में भी मालूम किया। वह पत्नी के साथ नाना को देखने माँ की जन्मभूमि गया। परन्तु नाना को यह बात पहले ही मालूम हो गई और वह एक और देश भाग गया था।

पेर्सियस वहाँ भी गया। नाना से मिलकर उसने पूछा-"नाना, मुझे देखकर क्यों डरते हो? तुमने यद्यपि मेरी माँ, और



मेरे साथ अन्याय किया है, पर मुझे तुमसे कोई दुश्मनी नहीं है। आओ, घर चलें।"

वहाँ प्रतिद्वन्द्वितायें हुईं। इस प्रतिद्वन्द्विता में जब पेर्सियस चक्र फेंक रहा था, तो वह हाथ से छूट पड़ा, निशाने पर न लगकर नाना को लगा। उस चोट के कारण वह मर गया। ज्योतिषियों का कहना ठीक निकला।

इस घटना से पेर्सियस को बहुत दुःख हुआ। यद्यपि नाना का राज्य अब उसी का था, पर उसे किसी और को देकर उसके बदले उसने पास में एक और राज्य ले लिया।

वहाँ पर्सियस कुछ समय तक अपनी पत्नी के साथ सुख से रहा।

कुछ वर्ष बीत गये। इस बीच उसने भयङ्कर सिर को एक गुप्त जगह गाढ़ दिया। पश्चिमी देवताओं की दी हुई चप्पल, तलवार, उनके थैले में रखकर, एक पहाड़ की चोटी पर रख आया, ताकि वे उन तक पहुँच सकें।

एक दिन पेर्सियस को समुद्र पर से अनेक नौकाएँ आती दिखाई दीं। उसे पता लगा कि उसके ससुर अपनी लड़की को ले जाने के लिए, जरूरत पड़ने पर



उससे युद्ध करने के लिए आ रहे थे। यह एक दूत ने आकर उसको बताया। पेर्सियस ने बहुत कहा पर दूत ने न सुनी।

"कम से कम ससुर जी से एक बार मुझसे और अपनी लड़की से बातचीत करने के लिए कहो। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम उनको कैद न करेंगे, न उन पर किसी शस्त्र का ही उपयोग करेंगे।" पेर्सियस ने दूत से कहा।

उस दिन रात को उसने भयङ्कर सिर को गुप्त जगह से निकाला और समुद्र के किनारे एक पत्थर के पीछे पानी में डुबोकर रख दिया, अगले दिन सवेरे ससुर की प्रतीक्षा करता, वह उसी पत्थर पर आकर बैठा।

बूढ़ा राजा एक नाव में जहाँ वह बैठा था वहाँ आया-"मैं अपनी लड़की को लेने के लिए आया हूँ। चाहे तुम कुछ भी करो पर मेरा निश्चय न बदलेगा।" पेर्सियस के ससुर ने कहा ।

"इधर देखिये। आपका मन जरूर बदलेगा।" कहकर पेर्सियस ने भयङ्कर सिर को उनके सामने उठाया और अपना मुँख एक तरफ मोड़ लिया।

बूढ़ा राजा अन्धा था। यह पेर्सियस न जानता था।

उसने अपने दामाद से कहा-"मेरा मन इस तरह कभी न बदलेगा।"

यह सुनते ही पेर्सियस जान गया कि भयङ्कर सिर का प्रभाव बूढ़े पर नहीं हुआ था। यह सोचकर उसका असर ही खतम हो गया है उसने अपना मुँह, भयङ्कर सिर की ओर मोड़ा। तुरन्त वह पत्थर हो गया।





[९]

अङ्ग और मगध देशों में पाँच करोड़पति व्यापारी रहा करते थे। उनमें मेद एक था। उसकी एक लड़की थी, जिसका नाम चन्द्रपद्मा था और उसके एक लड़का भी था, जिसका नाम धनञ्जर था। धनञ्जर की सुमना नाम की पत्नी थी। उनकी एक लड़की थी, उसका नाम विशाख था। उसकी आयु सात वर्ष की थी।

स्वबर मिली कि बुद्ध अङ्ग देश के भद्री नाम के ग्राम में आ रहे थे। मेद ने अपने लड़के धनञ्जर से कहा- "अपनी विशाख को बुद्ध के पास भेजो। देख आयेगी।" विशाख बुद्ध के पास जाने के लिए उतावला हो गई। उसके साथ उसकी उम्र की लड़कियाँ भी रथ में भेजी गईं। वे जब बुद्ध के पास पहुँची तो उनके समीप पैदल गई।

बुद्ध ने उस लड़की को देखते ही सोचा-"यह मेरी प्रधान शिष्या होगी और मेरे अन्य शिष्यों के लिए मातृ सद्दश।"

उन्होंने विशाख और उसके साथ आये हुए पाँच सौ लड़कियों को उपदेश दिया और उनको सन्मार्ग दिखाया। अगले

दिन विशाख का दादा, मेद भी बुद्ध के दर्शन करने आया। बुद्ध ने उसका दो सप्ताह तक आतिथ्य स्वीकार किया। फिर वे जेतवन चले गये।

सात आठ वर्ष बीत गये। राजगृह के राजा, बिम्बसार और कोशल के राजा आपस में बहिनोई थे, दोनों ने एक दूसरे की बहन से शादी की थी। राजगृह में बड़े बड़े व्यापारी थे। परन्तु कोशल में न थे। इसलिए कोशल के राजा ने बिम्बसार के पास जाकर कहा-"आप अपने नगर के एक व्यापारी को हमारे यहाँ भेजिये।" बिम्बसार ने धनञ्जर को बुलाकर कहा-"क्या तुम कोशल जाकर वहाँ रह सकोगे?"

"अगर आपकी आज्ञा हुई तो जाऊँगा ही।" धनञ्जर ने कहा।

वह कोशल देश के राजा के साथ मय परिवार के निकल पड़ा। रास्ते में, शाम होते होते वे एक बड़े खाली मैदान के पास पहुँचे। वहाँ एक चौरास्ता था। धनञ्जर ने कोशल राजा से कहा-"महाराज, मेरे साथ बहुत से आदमी हैं। इन सबके लिए, हो सकता है, आपके

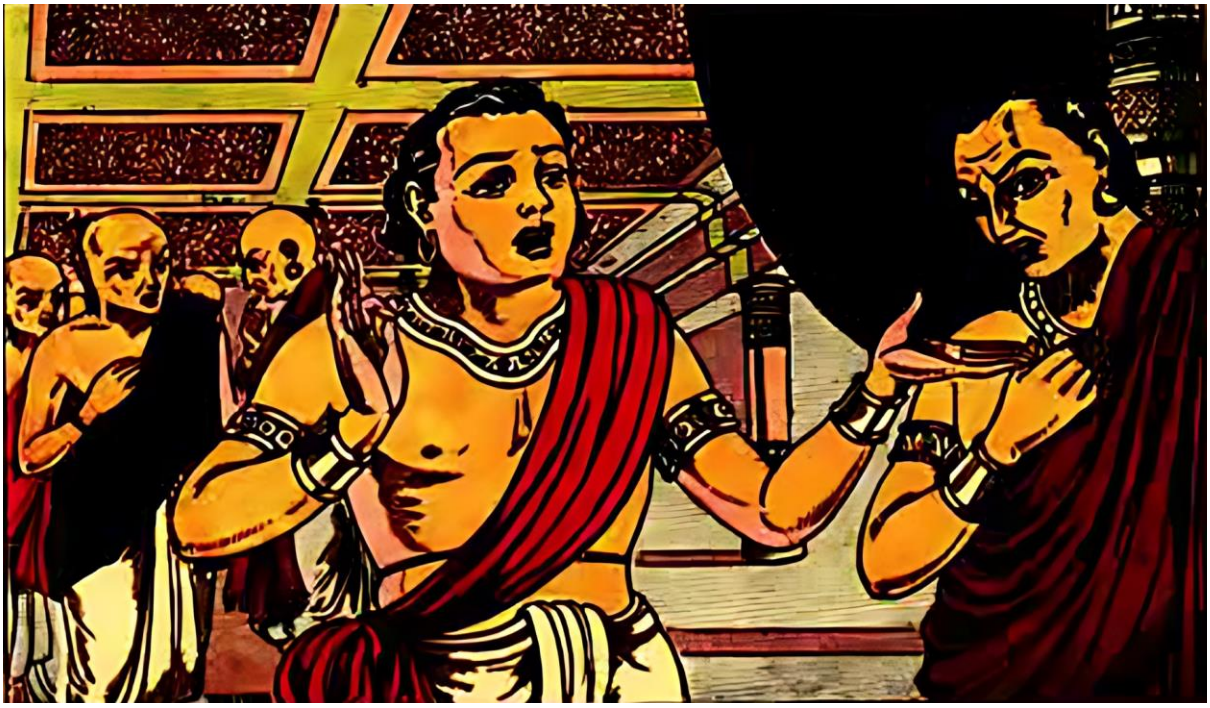


शहर में जगह न हो। अगर आपकी अनुमति हो, तो हम यहीं एक नगर बना लेंगे।"

कोशल देश का राजा इसके लिए मान गया। वहाँ साकेत नगर बनाया गया। राजा ने धनञ्जर को उस नगर का नायक बनाया।

उस समय श्रावस्ती नगर में, मिगार नाम के व्यापारी का एक लड़का था, जिसका नाम पूर्णवर्धन था। वह बहुत सुन्दर था। माँ बाप ने उससे शादी करने के लिए कहा। उसने कहा-"अगर मैंने विवाह किया, तो पञ्चकल्याणी कहलाई जानेवाली स्त्री से ही विवाह करूँगा।"

पञ्चकल्याणी की वेणी मयूर के पूँछ के समान होनी चाहिये, और होठ, चाहे पान खाये या न खाये एक ही रङ्ग में होने चाहिये। दान्त सफेद होने चाहिये। बड़े छोटे नहीं। टेढ़े मेढ़े नहीं। शरीर का रङ्ग सब जगह एक जैसा होना चाहिये। कहीं दाग नहीं होने चाहिये। चाहे कितने भी बच्चे हों, पर यौवन बना रहना चाहिये। भले ही उम्र हो जाये, पर बाल नहीं पकने चाहिये। माँ बाप, पूर्णवर्धन की बात की





उपेक्षा न कर सके। उन्होंने ऐसी कन्या ढूँढ़ने के लिए आठ ब्राह्मणों को जगह जगह भेजा। वे कई देशों में धूम धामकर, एक त्यौहार के दिन साकेत आये। त्यौहार था, इसलिए नगर की उत्तम स्त्रियों को गलियों में देखने का अवकाश मिला। वे ब्राह्मण एक जगह खड़े हो गये और गलियों में आने जानेवाली स्त्रियों को गौर से देखने लगे।

थोड़ी देर में पन्द्रह वर्ष की विशाख, अपनी सहेलियों के साथ वहाँ आई। थोड़ी-सी बारिश हुई। विशाख की सहेलियाँ दौड़कर छत के नीचे खड़ी हो गई। परन्तु विशाख धीमे धीमे छत की ओर आई, जैसे बारिश हो ही न रही हो।

"इनके दान्त कैसे हैं यह तो नहीं मालूम हो रहा है। किन्तु केश कल्याण, आदि चार कल्याण इस लड़की में हैं।" ब्राह्मणों ने सोचा, उसके दान्त देखने के लिए जरूरी था कि उससे बातचीत की जाये। इसलिए ब्राह्मणों ने उससे कहा-"न मालूम कौन अभागा तुम से शादी करेगा। सवेरे जो पानी लेने जाओगी, शाम के अन्धेरे होने तक वापस न आओगी, और इस बीच तुम्हारा पति उपवास करेगा।"

"आप यह कैसे कह रहे हैं?" विशाख ने ब्राह्मणों से पूछा।

"आँखों से देखने से क्या नहीं पता चल रहा है? वारिश के होते ही और लड़कियाँ छत के नीचे भागी भागी आई। और तुम बहुत देर तक नहीं आई।" ब्राह्मणों ने कहा।

"आप शायद सोच रहे हैं कि आलस्य के कारण में नहीं भाग सकी थी। परन्तु बड़ों ने कुछ के लिए भागना निषिद्ध कर रखा है। मुकुट और राजवेश पहने राजा

को भागना नहीं चाहिए। अम्मारीवाले हाथी को नहीं भागना चाहिए। सन्यासी को नहीं भागना चाहिए। स्त्री को नहीं भागना चाहिए और अविवाहित स्त्री तो बिकाऊ माल की तरह है। अगर भाग दौड़कर कहीं उसने हाथ-पैर तोड़ लिया तो उसका मूल्य कम हो जाता है।"

विशाख की बातें सुनकर ब्राह्मण सन्तुष्ट हुए। उन्होंने सोचा कि वह पूर्णवर्धन के उपयुक्त पत्नी होगी। उन्होंने उससे कहा भी कि वे किस काम पर आये थे। उन्होंने उसको एक कीमती हार दिया। विशाख सब सुनकर उन ब्राह्मणों को अपने पिता के पास ले गई। धनञ्जर ने ब्राह्मणों से वर के वंश, गोत्र आदि के बारे में पूछा। "उनकी कितनी सम्पति है?" फिर यह प्रश्न किया।

"उसके हिस्से में चालीस करोड़ मुहरें आती हैं।" ब्राह्मणों ने कहा।

"वह तो मेरी लड़की के शिरस्नान के लिए भी काफी नहीं हैं। परन्तु वंश, गोत्र आदि में, क्योंकि वह हमसे कम नहीं हैं, इसलिए मैं उसको अपनी लड़की देने के लिए तैयार हूँ।" धनञ्जर ने कहा।



ब्राह्मणों ने वापस जाकर मिगार को यह सब सुनाया। मिगार सन्तुष्ट हो साकेत नगर गया। अपने लड़के का विवाह निश्चित करके, यह शुभ समाचार राजा को बताने के लिए वह उनके दर्शनार्थ गया।

राजा ने सब सुनकर कहा-"ठीक है! धनञ्जर भी हमारा विश्वास पात्र है। मैंने ही उसको यहाँ बुलाया है। इसलिए विवाह में मैं भी सपरिवार उपस्थित होऊँगा।"

मिगार को चिन्ता सताने लगी। अगर राजा अपने परिवार, नौकर चाकरों के साथ आये, तो धनञ्जर उनके लायक



भोजन-पान, रहने आदि की व्यवस्था कर सकेगा कि नहीं। उसने धनञ्जर को यह सब कुछ बताते हुए कहा-"अगर यह विवाह

बिना किसी वैभव के कर दिया गया तो आपका बहुत-सा खर्च बचेगा, ऐसा मेरा ख्याल है।"

"अगर दस राजा भी अपने परिवार और नौकर चाकरों के साथ आयें तब भी मैं डरनेवाला नहीं हूँ।" धनञ्जर ने जवाब दिया। परन्तु मिगार को यह सब दिखावा सा लगा। यह धनञ्जर इधर-उधर के दिखावे में पड़कर अपने लिए गढ़ा खोद रहा है।

बरात साकेत नगर गई। राजा असंख्य आदमियों को लेकर पहुँचा। धनञ्जर ने सबके रहने की व्यवस्था की। उनके भोजन के लिए प्रबन्ध किया। उन्होंने सुनारों को बुलाकर ढेर-से हीरे मोती दिये। सोने-चान्दी वगैरह भी। "जल्दी मेरी लड़की के लिए आभूषण बनाकर लाओ।" उसने उनको आज्ञा दी।

दिन गुजरते गये। बराती मजे में आराम से खा-पी रहे थे। कब विवाह होना था, किसीको न मालूम था। राजा ने धनञ्जर को बुलाकर पूछा-"हमारा खर्च कब तक उठाओगे? जल्दी मुहूर्त निश्चित करके विवाह करके हमें भेज क्यों नहीं देते?"

"महाराज ! शुभ-मुहूर्त अभी चार महीनों तक नहीं आयेगा। आप मेरे लिए बिल्कुल भार नहीं हैं। विवाह होने तक आप सब मेरा आतिथ्य स्वीकार कीजिये। यही मेरी प्रार्थना है।" उसने कहा।

चारों महीनों, ऐसा लगता था, जैसे हर घर में विवाह हो रहा हो। अतिथियों को किसी बात की कमी न थी। वर्षा शुरू हो गई थी। इसलिए ईन्धन की कमी थी। रोज पाँच-सौ गाड़ी ईन्धन की जरूरत थी।



सेवकों ने धनञ्जर से आकर कहा- "ईन्धन मिलना बहुत मुश्किल हो रहा है।" उसने आज्ञा दी-"अस्तबल और हस्तिशालाओं को तोड़ दो और उनकी लकड़ी को ईन्धन बनाकर जलाओ।"

चार महीने गुज़र गये। सुनार, आभूषण बनाकर ले आये। विवाह के दिन वधु को आभूषण पहिनाये गये। उसके शरीर पर सात करोड़ मुहरों के आभूषण थे। (कहा जाता है, उस समय में, इतने आभूषण दो ही स्त्रियों के पास थे। उनमें से एक सुजाता थी। सिद्धार्थ के बुद्ध होने के पहले, वह उन आभूषणों को पहनकर उनको खीर देने गई थी। दूसरी बन्धुल क्षत्रिय की पत्नी थी। इस बन्धुल के बारे में हम आगे आगे जान सकेंगे।)

विवाह समाप्त हुआ। धनञ्जर ने गाड़ियाँ भरकर सोना, चान्दी, गृहस्थी के उपकरण आदि लड़की को दिये। उसकी रक्षा के लिए आठ बुद्धिमानों को दिया। हजारों दास-दासियों दी। एक लाख बीस हजार गौवें दीं। वह राजा और बरातियों को आधे रास्ते तक पहुँचा कर वापस चला आया।

मिगार को लगा जैसे सफेद हाथी खरीद लाया हो। "बहू के साथ इतने सारे लोग क्यों? इन सब का खर्च में कैसे उठाऊँ?" उसने सोचा।

वधू जब गृह प्रवेश कर रही थी तो राजा व अन्य सामन्तों ने विशाख को अमूल्य उपहार दिये। विशाख को न सूझा कि उनका क्या करे। उसने एक की दी हुई चीज़ दूसरे को भेंट में दे दी।

(अभी है)



CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1959 Regd. No. M. 5452

